महाराष्ट्र बार काउन्सिल

बनाम

एम० वी० दभोलकर

(Bar Council of Maharashtra

Vs.

M. V. Dabholkar)

(13 अगस्त, 1975)

(मुख्य न्यायाधिपति ए० एन० रे, न्या० एच० आर० खन्ना, के० के० मैथ्यू, एम० एच० बेग, वी० आर० कृष्ण अय्यर, ए० सी० गुप्ता और एस० मुर्तजा फ़ज़ल अली)

एडवोकेट्स ऐक्ट, 1961 (1961 का 25)--धारा 38--महाराष्ट्र बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा प्रत्यर्थियों को वृत्तिक अवचार के आधार पर तीन वर्ष तक विधि व्यवसाय करने से निलम्बित किया जाना--प्रत्यर्थियों द्वारा बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया में अपील--बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया द्वारा प्रत्यर्थियों को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया जाना--राज्य बार काउन्सिल द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील--धारा 38 में प्रयुक्त 'भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा किए गए किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति' शब्दों का अर्थ--राज्य बार काउन्सिल धारा 38 के अधीन अपील करने के लिए 'सुनवाई का अवसर' रखने वाली 'व्यथित पक्षकार' है और अपील चलने योग्य है।

शब्द और पद--'व्यथित पक्षकार'--इस पद का अर्थ कानून के प्रयोजन और उसके उपबन्धों के प्रति निर्देश से अभिनिश्चित किया जाना होता है।

महाराष्ट्र बार काउन्सिल को प्रत्यर्थियों के विरुद्ध उच्च न्यायालय से एक शिकायत प्राप्त हुई थी। वह शिकायत महाराष्ट्र बार काउन्सिल ने अपनी अनुशासनिक समिति को निर्दिष्ट कर दी। अनुशासनिक समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि प्रत्यर्थियों के विरुद्ध वृत्तिक अवचार का प्रथमदृष्टया मामला है और उसने रजिस्ट्रार को यह निदेश दिया कि वह सम्पृक्त पक्षकारों के नाम, जिनमें महाधिवक्ता भी शामिल है, अधिनियम की धारा 35(2) के अधीन सूचनाएं जारी करे। जांच के दौरान यह पाया गया कि प्रत्यर्थी ऐसे वृत्तिक अवचार के दोषी हैं जिससे बार की ख्याति काफी कम होती है और प्रत्यर्थियों को तीन वर्ष की अवधि तक विधि व्यवसाय करने से निलम्बित करने का निदेश दे दिया। प्रत्यर्थियों ने अनुशासनिक समिति के आदेशों के विरुद्ध भारत की बार काउन्सिल में अपील फाइल की। इन अपीलों में प्रत्यर्थियों ने राज्य बार काउन्सिल को प्रत्यर्थी के रूप में एक पक्षकार बनाया। भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति ने प्रत्यर्थियों को वृत्तिक अवचार के अपराध से दोषमुक्त कर दिया। भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के उक्त निर्णय के विरुद्ध राज्य बार काउन्सिल ने उच्चतम न्यायालय में यह अपील की है। इन अपीलों में विचारार्थ प्रश्न यह है कि क्या राज्य बार काउन्सिल एडवोकेट्स ऐक्ट, 1961 की धारा 38 के अधीन बार काउन्सिल आफ इण्डिया की अनुशासनिक समिति द्वारा दिए गए किसी आदेश से "व्यथित व्यक्ति" है। प्रश्न का उत्तर सकारात्मक देते हुए,

अभिनिर्धारित—(मुख्य न्यायाधिपति रे के अनुसार) "भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा किए गये आदेश से "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का अर्थ जानने के लिए सबसे पहले दो मुख्य बातें ध्यान में रखनी होंगी। प्रथमत: अनुशासनिक समिति के समक्ष कार्यवाहियों में कोई वाद (लिस) नहीं होता जब अनुशासनिक समिति किसी अधिवक्ता को धिग्दण्ड देने की या अधिवक्ता को विधि व्यावसाय करने से निलम्बित करने की या अधिवक्ता का नाम हटाने की शक्ति का प्रयोग करती है तब समिति पक्षकारों के बीच किसी वाद का विनिश्चय नहीं करती। जब बार काउन्सिल अनुशासनिक समिति के समक्ष कोई मामला रखती है तब वह किसी दांडिक मामले में अभियोजक के रूप में कार्य नहीं करती जो परिवादी किसी

अधिवक्ता के विरुद्ध शिकायत करता है वह किसी सिविल वाद में वादी के समान नहीं होता। बार काउन्सिल द्वारा शिकायत की परीक्षा इस बात को जानने के लिए की जाती है कि क्या यह विश्वास करने का कोई कारण है कि कोई अधिवक्ता अवचार का दोषी है। बार काउन्सिल ऐसी जानकारी के आधार पर, जो उसे अपने कर्तव्यों के अनुक्रम में प्राप्त हुई हो, स्वप्रेरणा से कार्यवाही कर सकती है। द्वितीयत: अनुशासनिक कार्यवाहियों का कोई भी पक्षकार नहीं होता। ऐसा इसलिए है, क्योंकि यथास्थिति बार काउन्सिल, महान्यायवादी, महाधिवक्ता ये सभी अधिवक्ताओं के हितों और जनता के हितों की रक्षा करने का कार्य करते हैं। इस प्रकार कार्य करते समय अधिवक्ता और किसी अन्य व्यक्ति के बीच कोई परस्पर विरोध नहीं होता। इसका कारण यह है कि वृत्तिक आचरण, वृत्तिक शिष्टाचार, वृत्तिक आचारनीति और वृत्तिक सदाचार जैसी बातों को कायम रखा जाना होता है जिनके अतिक्रमण के परिणामस्वरूप अधिवक्ता को धिग्दण्ड दिया जाता है या विधि व्यवसाय करने से उसे निलम्बित किया जाता है या नामावली से उसका नाम काट दिया जाता है। (पैरा 24)

शब्द "व्यथित व्यक्ति" अनेक कानूनों में पाये जाते हैं। "व्यथित व्यक्ति" शब्द का अर्थ कानून के प्रयोजन और उसके उपबन्धों के प्रति निर्देश से अभिनिश्चित करना होता है। कभी-कभी यह कहा जाता है कि "व्यथित व्यक्ति" शब्द सुने जाने के अधिकार की, जो न्यायिक उपायों के सम्बन्ध में उत्पन्न होता है, अपेक्षा के समरूप होता है। (पैरा 26)

जहां किसी प्रशासनिक या न्यायिक विनिश्चय के विरुद्ध न्यायालय में अपील करने का अधिकार कानून द्वारा सृष्ट होता है, वहां ऐसा अधिकार निश्चित ही किसी व्यथित व्यक्ति या ऐसे व्यक्ति तक ही सीमित होता है जो व्यथित होने का दावा करता है। "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का अर्थ कानून के सन्दर्भ के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकता है। इसका एक अर्थ यह है कि किसी व्यक्ति को किसी विनिश्चय द्वारा व्यथित उस समय माना जायेगा यदि उक्त विनिश्चय तात्विक रूप से उसके विरुद्ध हो। सामान्यत: ऐसे व्यक्ति को यह सिद्ध करना होता है कि "व्यथित व्यक्ति" बनने के लिए उसे किसी ऐसी बात से इंकार या वंचित किया गया है जिसके

लिए वह वैध रूप से हकदार होता है। इसके अतिरिक्त कोई व्यक्ति उस समय व्यथित होता है यदि उस पर कोई विधिक भार अधिरोपित किया जाता है। "व्यथित व्यक्ति" शब्दों के अर्थ को कभी-कभी कुछ ऐसे कानूनों में सीमित अर्थ दिया जाता है जिनमें प्राइवेट विधिक अधिकारों के संरक्षण के लिये उपायों की व्यवस्था की गई होती है। सीमित अर्थ से विधिक अधिकारों से इंकार करना या उनसे वंचित किया जाना अपेक्षित है। उन कानूनों की पृष्ठभूमि में जो सम्पत्ति अधिकारों के बारे में नहीं हैं बल्कि वृत्तिक आचरण और सदाचार के बारे में हैं और अधिक उदार दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत होती है। एडवोकेट्स ऐक्ट के अधीन बार काउन्सिल की भूमिका की तुलना वृत्तिक आचारनीति में संरक्षण की भूमिका के साथ की जा सकती है। अधिनियम की धारा 37 और 38 में "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का व्यापक अर्थ है और उनका निर्वचन विधिक अधिकार रखने या उनसे वंचित किये जाने अथवा वित्तीय हितों के भार तक ही सीमित नहीं किया जाना चाहिए। इसकी कसौटी यह है कि क्या "व्यथित व्यक्ति" शब्दों के अन्तर्गत "ऐसा व्यक्ति भी आता है जिसकी यह यथार्थ शिकायत है क्योंकि ऐसा आदेश दिया गया है जो उसके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है"। अतः इस बात का पता लगाना होता है कि क्या बार काउन्सिल को वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार पर प्रभाव डालने वाले किसी आदेश या विनिश्चय की बाबत कोई शिकायत है। (पैरा 27)

बार काउन्सिल निम्नलिखित कारणों से "व्यथित व्यक्ति" है। प्रथमतः अधिनियम में "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का कानून के प्रयोजन और उपबन्धों के सन्दर्भ में व्यापक अर्थ है। अनुशासनिक समिति के समक्ष अनुशासनिक कार्यवाहियों में कोई वाद नहीं है और उसमें कोई पक्षकार नहीं हैं। अतः "व्यक्ति" शब्द के अन्तर्गत बार काउन्सिल भी आएगी जो राज्य की बार का प्रतिनिधित्व करती है। द्वितीयतः बार काउन्सिल "व्यथित व्यक्ति" है क्योंकि वह वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों की सामूहिक अन्तर्भावना को प्रदर्शित करता है। बार काउन्सिल व्यवसाय की शुद्धता और गरिमा के संरक्षक के रूप में कार्य करती है। तृतीयतः अधिवक्ताओं के विरुद्ध शिकायतें ग्रहण करने के पश्चात् बार काउन्सिल का कृत्य यह होता है कि जब बार काउन्सिल को यह युक्तियुक्त

विश्वास हो कि अवचार का प्रथमदृष्टया मामला मौजूद है तब वह अनुशासनिक समिति को ऐसी जांच सौंपती है। जब एक बार जांच आरम्भ हो जाती है तब बार काउन्सिल का उसके विनिश्चय में कोई नियन्त्रण नहीं रहता। बार काउन्सिल उसे किसी अन्य अनुशासनिक समिति को सौंप सकती है या बार काउन्सिल भारत की बार काउन्सिल को उस की रिपोर्ट भेज सकती है। इस से यह उपदर्शित होता है कि बार काउन्सिल इस व्यवसाय के अनुशासन, गरिमा और शिष्टाचार का प्रतिपादन करने के लिए सदैव कार्यवाहियों में हितबद्ध होती है। चतुर्थतः, अनुशासनिक समिति के विनिश्चय को केवल अधिनियम के अधीन उपबंधित अपीलों के अनुसार ही ठीक किया जा सकता है। जब बार काउन्सिल अवचार के मामलों को अनुशासनिक समिति को निर्देशित करके कार्यवाहियां शुरू करता है तब बार काउन्सिल अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का पालन करते हुए यह देखने के कार्य में हितबद्ध होता है कि अधिवक्ता इस व्यवसाय के उचित स्तर और शिष्टाचार को बनाए रखते हैं या नहीं। पांचवां बार काउन्सिल महत्वपूर्ण रूप से बार काउन्सिल के कृत्यों के सन्दर्भ में उसके विनिश्चय से संबंधित होती है। यदि किसी विनिश्चय से वृत्तिक आचरण और आचारनीति के स्तरों को बनाए रखने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तो बार काउन्सिल को उसके विरुद्ध शिकायत होगी। (पैरा 30)

(न्यायाधिपति बेग के अनुसार) : राज्य बार काउन्सिल का अपनी नामावली के किसी अधिवक्ता के विरुद्ध, या तो आरम्भ में या अपीली क्रम पर, अनुशासनिक कार्यवाही में अपनी कार्यपालिका हैसियत में भाग लेने में कोई भी आपत्ति प्रतीत नहीं होती। इसके पूर्व कि वह किसी ऐसे आदेश द्वारा जिसके विरुद्ध वह अपील कर सके, "व्यथित व्यक्ति" बन सके, विनिश्चित किए जाने के लिए कोई ऐसा लिस (वाद) या विवाद अवश्य होना चाहिए जिसमें ऐसा आदेश दिया गया हो जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है। ऐसे लिस में राज्य बार काउन्सिल को उसकी कार्यपालिका हैसियत में एक पक्षकार समझा जाना चाहिए। प्रकटतः उसके हितों का महाधिवक्ता द्वारा पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व किया जाता है। अतः, यह आवश्यक नहीं समझा गया कि उसकी अनुशासनिक समिति द्वारा कोई सूचना देकर उसका पृथक् प्रतिनिधित्व किया जाए, जैसा कि महाधिवक्ता के मामले में उपबंध किया गया है। किन्तु उसकी अनुशासनिक

1975(8) eILR(PAT) SC 1

समिति के समक्ष भी, यदि वह ऐसा चाहे तो, प्रतिनिधित्व करने के मार्ग में कोई भी विधिक बाधा प्रतीत नहीं होती । उसको निश्चित ही प्रत्येक शिकायत की उस समय जानकारी होती है जब वह अपनी अनुशासनिक समिति को कोई शिकायत भेजती है । प्रत्येक अवस्था में, "व्यथित व्यक्ति" के रूप में अपील करने का उसका अधिकार अधिनियम की धारा 37 और 38 के उपबंधों के अन्तर्गत ठीक-ठीक आ जाता है । स्वयं प्रत्यर्थियों ने बार काउन्सिल को 'लिस' में हितबद्ध पक्षकार के रूप में माना है जिससे कि वह प्रत्यर्थियों के, जब कि उन्होंने भारत की बार काउन्सिल के समक्ष की गई अपनी अपीलों में राज्य बार काउन्सिल को प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया था, विरुद्ध आदेशों के अपास्त किए जाने पर "व्यथित व्यक्ति" बन सके । धारा 38 के अधीन इस न्यायालय में अपील करने के उसके कानूनी अधिकार पर इस तथ्य मात्र से कोई प्रभाव नहीं पड़ता है कि वह भारत के बार काउन्सिल के समक्ष उपसंजात नहीं हुई थी । (पैरा 41)

(न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर के अनुसार) : सामान्य सा पद "व्यथित व्यक्ति" न केवल कानूनों में और रिट अधिकारिता में ही बार-बार आता है बल्कि इस पर आंग्ल-अमरीकी (ऐंग्लो अमेरिकन) और भारतीय न्यायालयों में अनेकों स्थितियों और विधायी पर्यावरणों में न्यायिक विचार भी किया गया है । विधि संबंधी ऐसी भाषा के अनिश्चित शब्दार्थों के होते हुए भी, भारतीय विधायी प्रारूपकार आंग्ल भाषा की कला के प्रति अपनी भाषा संबंधी निष्ठा के कारण उन शब्दों का प्रयोग करते रहे और भारतीय न्यायाधीश प्रायः उन प्राचीन आंग्ल नजीरों से निर्वाचन विषयक प्रेरणा लेते रहे । क्या राज्य बार काउन्सिल एक "व्यथित व्यक्ति" है ? इस संबंध में किसी भी संकीर्ण, पाण्डित्यदर्शी, तकनीकी या सदियों से चले आ रहे अर्थान्वयन का अन्धानुकरण नहीं किया जा सकता । इसके विपरीत ऐसे युक्तियुक्त अर्थान्वयन का, जिसमें सामाजिक विवेक और अधिनियमिति के उपयोगी प्रयोजन भी बताए गए हों, न्यायिक प्रयास करते समय अवलम्ब लिया जाना चाहिए । विधि व्यवसाय करने के लिए एकाधिकार अनुज्ञप्ति का दिया जाना तीन धारणाओं पर आधारित है— (1) वकील को सामाजिक रूप से लाभप्रद कृत्य का पालन करना होता है, (2) वकील एक ऐसा वृत्तिक व्यक्ति होता है जो उस कृत्य का पालन

करेगा ; और (3) एक वृत्तिक व्यक्ति के रुप में उसका कार्य स्वयं उसके द्वारा और इससे अधिक औपचारिक रूप से सम्पूर्ण व्यवसाय द्वारा विनियमित होता है । **ए० पी० गांधी** बनाम **एच० एम० सीरवाई** के मामले में भिन्न-भिन्न मत प्रकट किए गए थे किन्तु सभी ने बार काउन्सिल को एक "व्यथित व्यक्ति' मानने में सहमति व्यक्त की थी । **भटराजू वाले मामले** के विनिश्चय में इस दृष्टिकोण के अनुरूप एक टिप्पण को अवैध घोषित किया गया था । एडवोकेट्स ऐक्ट जैसे किसी कानून की रूपरेखा तैयार करते समय व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण को इस सुकारण से सामने रखा जाना चाहिए कि अब अधिकार एवं न्याय के विधिक बांधों को निरंकुशता या नागरिकों के दुष्कृत्यों से भंग किया जाता है तब बार सुरक्षा के प्रहरी के रूप में उनकी रक्षा करती है । वृत्तिक अवचार का मामला किसी ऐसे सार्वजनिक व्यवसाय के व्यक्ति के अवचार के बारे में ऐसा सार्वजनिक अन्वेषण है, जिसमें बार के प्रत्येक सदस्य की ख्याति के नष्ट हो जाने का डर है और न्याय प्रशासन से संबंधित प्रत्येक व्यक्ति इसमें हितबद्ध है । परम्परागत रूप से प्रतिपक्षी पद्धति से अभ्यस्त होने के कारण हम व्यथित व्यक्ति विशेष की तलाश करते हैं । (पैरा 46, 48, 52, 53 और 54)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1971]	(1971) 1 एस० सी० आर० 863 : **आदि फिरोजशाह गांधी बनाम एच० एम० सीरवाई** (Adi Pherozshah Gandhi *Vs.* H.M. Seervai);	21, 22, 53 और 58
[1961]	(1961) ए० सी० 617: **अटर्नी जनरल ऑफ दि गाम्बिया बनाम पियेरे सार एन० जी** (The Attorney General of the Gambia *Vs.* Pierra Sarr N. Jie);	58

1975(8) eILR(PAT) SC 1

[1955] (1955) 1 एस० सी० आर० 1055:
भटराजू नागेश्वर राव बनाम मद्रास उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश और अन्य
(Bhatrajun Nageshwara Rao *Vs.* The Hon'ble Judges of the Madras High Court and Others); 53

[1947] (1947) 2 आल इंग्लैण्ड रिपोर्ट्स 395:
बी० जॉन्सन एण्ड कम्पनी (बिल्डर्स) बनाम मिनिस्टर ऑफ हैल्थ
[B. Johnson & Co. (Builders) *Vs.* The Minister of Health]; 38

7 एच० एल० सी० ए० 641 :
बटलर बनाम माउण्टगारेट
(Butler *Vs.* Mountgarret). 38

सिविल अपीली अधिकारिता : 1974 की सिविल अपील संख्या 1461 से 1468.

1973 की डी०सी० अपील संख्या 15 से 19, 21, 22 और 25 में भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के तारीख 14 अप्रैल, 1974 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई अपीलें।

अपीलार्थी की ओर से (सभी अपीलों में)	सर्वश्री वी०एस० देसाई, विमल दवे और कुमारी कैलाश मेहता
प्रत्यर्थी की ओर से (1974 की सिविल अपील संख्या 1461में)	श्री एम०वी० दभोलकर (स्वयं)
प्रत्यर्थी की ओर से (1974 की सिविल अपील संख्या 1462–64 में)	उर्मिला सिरूर
प्रत्यर्थी की ओर से (1974 की सिविल अपील संख्या 1466 में)	सर्वश्री वी०एन० गनपुले और वी० एच० दीक्षित (स्वयं)

प्रत्यर्थी की ओर से (1974 की सिविल अपील संख्या 1466 में)	श्री के० जी० मंडालिया (स्वयं)
प्रत्यर्थी की ओर से (1974 की सिविल अपील संख्या 1467 में)	श्री ई० उदयरत्नम् और ए० के० दोषी (स्वयं)
प्रत्यर्थी की ओर से (1974 की सिविल अपील संख्या 1468 में)	श्री डी० के० रार्यासघानी (स्वयं)
बिहार राज्य बार काउन्सिल की ओर से	सर्वश्री के० के० सिन्हा और एस० के० सिन्हा
भारत की बार काउन्सिल की ओर से	श्री डी० वी० पाटिल और श्रीमती के० हिंगोरानी

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति ए० एन० रे ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति रे—

ये अपीलें इस प्रश्न का अवधारण करने हेतु इस न्यायपीठ के समक्ष रखी गई हैं कि क्या राज्य बार काउन्सिल (बार काउन्सिल ऑफ स्टेट) एडवोकेट्स ऐक्ट, 1961 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) को धारा 38 के अधीन अपील करने के लिए "व्यथित व्यक्ति" है।

2. महाराष्ट्र बार काउन्सिल ने प्रत्यर्थियों के विरुद्ध उच्च न्यायालय से प्राप्त एक शिकायत पर 8 अगस्त, 1964 को विचार किया था और यह संकल्प किया था कि प्रत्यर्थियों के विरुद्ध उच्च न्यायालय से प्राप्त शिकायत को अनुशासनिक समिति को निर्दिष्ट किया जाए। महाराष्ट्र बार काउन्सिल द्वारा उसी दिन एक और संकल्प पारित किया गया था जिसके द्वारा मैसर्स होतचन्द अडवानी, आर० डब्ल्यू० अदिक और एस० सी० छागला को शिकायतों की जांच करने के लिए अनुशासनिक समिति के सदस्यों के रूप में निर्वाचित किया गया था।

3. उपर्युक्त अनुशासनिक समिति की बैठक 19 मार्च, 1965 को हुई और महाराष्ट्र राज्य की बार काउन्सिल की ओर से अधिवक्ताओं की सुनवाई की गई। समिति के समक्ष रखे गए कागजातों पर विचार करने के पश्चात् उसने रजिस्ट्रार को यह निदेश दिया कि वह "सम्पृक्त पक्षकारों के नाम जिनमें महाधिवक्ता भी शामिल है" अधिनियम की धारा 35(2) के अधीन सूचनाएं जारी करे। समिति ने यह भी राय व्यक्त की कि "यह वृत्तिक अवचार का प्रथमदृष्टया मामला है।"

4. महाराष्ट्र बार काउन्सिल ने 18 मई, 1965 को अधिनियम की धारा 35 के अधीन प्रत्यर्थियों के नाम सूचनाएं जारी कर दीं। इस सूचना के बारे में यह कहा गया था कि वह प्रत्यर्थियों के विरुद्ध स्वप्रेरणा से जांच है। इस सूचना में यह बताया गया है कि महाराष्ट्र बार काउन्सिल की जानकारी में यह आया है कि प्रत्यर्थी प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट, एस्प्लेनेड, फोर्ट मुम्बई, के न्यायालय के भवन के प्रवेश द्वार पर खड़े हुए थे और काम के लिए आग्रह कर रहे थे और साधारणतः उस स्थान पर अभद्र तरीके से व्यवहार कर रहे थे और उक्त कार्य वृत्तिक और/या अन्य अवचार की कोटि में आते हैं और बार काउन्सिल ने अनुशासनिक समिति का गठन किया और सर्वश्री एच० जी० अडवानी, आर० डब्ल्यू० अदिक और एस० सी० छागला से मिल कर बनी समिति को जांच करने का कार्य सौंपा गया है।

5. उक्त अनुशासनिक समिति ने 31 अगस्त, 1968 तक साक्ष्य की सुनवाई की। 14 जून, 1969 को महाराष्ट्र बार काउन्सिल ने एक संकल्प पारित किया जिसमें उपर्युक्त अनुशासनिक समिति से यह अनुरोध किया गया था कि वह 31 मार्च, 1969 से पूर्व अपने समक्ष लंबित जांच के संबंध में आगे कार्यवाही करे।

6. महाराष्ट्र बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति ने 27 जून, 1973 को प्रत्यर्थियों को ऐसे आचरण का दोषी पाया जिससे जनता की दृष्टि में बार की ख्याति काफी कम हो गई थी। अनुशासनिक समिति ने यह निदेश दिया कि प्रत्यर्थी तीन वर्ष की अवधि तक अधिवक्ताओं के रूप में विधि व्यवसाय करने से निलंबित रहेंगे। ये निलंबन आदेश 1 अगस्त, 1973 से लागू होने थे।

7. प्रत्यर्थियों ने भारत की बार काउन्सिल (बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया) के समक्ष अपील की। इन अपीलों में प्रत्यर्थियों ने महाराष्ट्र बार काउन्सिल को प्रत्यर्थियों के रूप में पक्षकार बनाया। महाराष्ट्र बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के आदेशों को अपास्त करते हुए भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया—

> "महाराष्ट्र बार काउन्सिल हाजिर नहीं हुई है, हालांकि उन्होंने स्वप्रेरणा से कार्यवाहियां प्रारंभ की थीं और हम खर्चे की बाबत कोई आदेश नहीं देते हैं और हम यह निदेश देते हैं कि प्रत्येक पक्षकार अपना खर्चा स्वयं बरदाश्त करेंगे। तथापि, हमने साक्ष्य पर स्वयं विचार किया है और वह अपीलार्थियों द्वारा विस्तार में पेश भी किया गया है। जो कुछ हम कह सकते हैं वह यह है कि हम यह प्रत्याशा करते थे कि अपील में महाराष्ट्र बार काउन्सिल का प्रतिनिधित्व किया जाता क्योंकि कार्यवाहियां स्वप्रेरणा से प्रारंभ की गई थीं।"

8. भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के इन कथनों से यह उपदर्शित होता है कि महाराष्ट्र बार काउन्सिल को भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के समक्ष उपसंजात होना चाहिए था।

9. एडवोकेट्स ऐक्ट की स्कीम संक्षेप में इस प्रकार है—

> "राज्य बार काउन्सिलें होंगी। भारत की बार काउन्सिल होगी। प्रत्येक बार काउन्सिल एक निगमित निकाय है।"

10. राज्य बार काउन्सिल के कृत्य, अन्य बातों के साथ-साथ, अपनी नामावली (रोल) के अधिवक्ताओं के विरुद्ध अवचार के मामलों को ग्रहण करना और उनका अवधारण करना है तथा अपनी नामावली के अधिवक्ताओं के अधिकारों, विशेषाधिकारों और हितों की रक्षा करना है।

11. भारत की बार काउन्सिल के कृत्य, अन्य बातों के साथ-साथ, वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तर अधिकथित करना, अपनी अनुशासनिक समिति और राज्य बार काउन्सिलों की अनुशासनिक समिति

द्वारा अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया अधिकथित करना, अधिवक्ताओं के अधिकारों, विशेषाधिकारों और हितों की रक्षा करना और राज्य बार काउन्सिलों का साधारण पर्यवेक्षण करना और उन पर नियंत्रण रखना है।

12. प्रत्येक बार काउन्सिल द्वारा अनुशासनिक समितियां गठित की जाती हैं। बार काउन्सिल से एक या अधिक अनुशासनिक समितियां गठित करने की अपेक्षा की जाती है। प्रत्येक अनुशासनिक समिति में तीन व्यक्ति सम्मिलित होंगे जिनमें से दो व्यक्ति काउन्सिल द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित व्यक्ति होंगे और तीसरा व्यक्ति काउन्सिल द्वारा उन अधिवक्ताओं में से सहयोजित व्यक्ति होगा जो अधिनियम की धारा 3(2) के परन्तुक में विनिर्दिष्ट अर्हताएं रखते हों और जो काउन्सिल के सदस्य न हों और अनुशासनिक समिति के सदस्यों में से ज्येष्ठतम अधिवक्ता उसका सभापति होगा।

13. जब किसी बार काउन्सिल और भारत की बार काउन्सिल की कार्यपालिका समितियों में और राज्य बार काउन्सिल की नामांकन समिति में (इन्रोलमेण्ट कमेटी) में और भारत की बार काउन्सिल की विधि शिक्षा समिति (लीगल एजूकेशन कमेटी) में ऐसे सदस्य सम्मिलित हों जो कि काउन्सिल द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित किए गए हों, तो यह ध्यान देने योग्य बात है कि राज्य की बार काउन्सिल तथा भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति में भी ऐसे तीन व्यक्ति सम्मिलित होंगे जिनमें से दो व्यक्ति काउन्सिल द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित किए जाएंगे और तीसरा व्यक्ति काउन्सिल द्वारा ऐसे अधिवक्ताओं में से सहयोजित व्यक्ति होगा जो काउन्सिल के अन्यथा सदस्य नहीं है।

14. अधिनियम का अध्याय 5 अधिवक्ताओं के आचरण से संबंधित है। अध्याय 5 में 35 से 44 तक धाराएं हैं। धारा 35 में यह कहा गया है कि कोई शिकायत प्राप्त होने पर या अन्यथा राज्य बार काउन्सिल को यह विश्वास करने का कारण है कि उसकी नामावली में कोई अधिवक्ता वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी है तो वह मामले को निपटाने हेतु अपनी अनुशासनिक समिति को निर्दिष्ट करेगा। राज्य बार काउन्सिल या तो स्वप्रेरणा से या किसी हितबद्ध व्यक्ति द्वारा

किए गए आवेदन पर, अपनी अनुशासनिक समिति के समक्ष लम्बित किसी कार्यवाही को वापस ले सकेगी और यह निदेश दे सकेगी कि राज्य बार काउन्सिल की किसी अन्य अनुशासनिक समिति द्वारा जांच की जाएगी। राज्य बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति मामले की सुनवाई के लिए तारीख नियत करेगी और संबंधित अधिवक्ताओं को और राज्य के महाधिवक्ता को सूचना की तामील करवाएगी। राज्य बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति निम्नलिखित आदेशों में से कोई भी आदेश कर सकेगी, अर्थात् (क) शिकायत को खारिज कर सकती है अथवा जहां कार्यवाहियां राज्य बार काउन्सिल के अनुरोध पर शुरु की गई हों वहां यह निदेश दे सकती है कि कार्यवाहियां फाइल कर दी जाएं, (ख) अधिवक्ता को धिग्दण्ड कर सकती है; (ग) अधिवक्ता को ऐसी अवधि के लिए निलम्बित कर सकती है जो वह ठीक समझे, या (घ) अधिवक्ताओं की राज्य नामावली (स्टेट रोल) से अधिवक्ता का नाम हटा सकती है।

15. धारा 36 भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक शक्तियों के बारे में है और उसमें यह उपबंध किया गया है कि शिकायत प्राप्त होने पर या अन्यथा भारत की बार काउन्सिल को यह विश्वास करने का कारण है कि कोई ऐसा अधिवक्ता, जिसका नाम किसी भी राज्य नामावली में सम्मिलित नहीं है, वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी है तो वह मामले को निपटाने हेतु अपनी अनुशासनिक समिति को निर्दिष्ट करेगी। भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति या तो स्वप्रेरणा से या किसी राज्य बार काउन्सिल की रिपोर्ट पर या किसी हितबद्ध व्यक्ति द्वारा किए गए आवेदन पर किसी भी बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के समक्ष किसी अधिवक्ता के विरुद्ध लम्बित अनुशासनिक कार्यवाही को अपने समक्ष की जाने वाली जांच कार्यवाही के लिए वापस मंगा सकेगी और उसका निपटारा करा सकेगी।

16. धारा 37 भारत की बार काउन्सिल से अपील करने के बारे में है। इस धारा में यह कहा गया है कि राज्य बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति या राज्य का महाधिवक्ता, आदेश की संसूचना की तारीख के 60 दिन के भीतर भारत की बार काउन्सिल में अपील कर सकेगा।

17. धारा 38 में उच्चतम न्यायालय में अपील करने के लिए उपबंध किया गया है। धारा 38 में यह कहा गया है कि यथास्थिति धारा 36 या धारा 37 के अधीन भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा किए गए आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति या भारत का महान्यायवादी या राज्य का महाधिवक्ता उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकेगा।

18. अधिनियम की धारा 49 में यह उपबंध किया गया है कि भारत की बार काउन्सिल अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का निर्वहन करने के लिए नियम बना सकेगी और विशिष्टतः ऐसे नियमों में अन्य बातों के साथ-साथ अधिवक्ताओं द्वारा पालन किए जाने वाले वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तर विहित किए जा सकेंगे। भारत की बार काउन्सिल ने अधिनियम की धारा 49 (ग) के अधीन नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग करते हुए तारीख 10 और 11 जुलाई, 1954 को वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों के नियम अनुमोदित किए थे। वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तर पांच धाराओं में वर्णित किए गए हैं। पहली धारा न्यायालय के प्रति अधिवक्ताओं के कर्त्तव्य के बारे में है। दूसरी धारा कक्षीकारों के प्रति अधिवक्ताओं के कर्त्तव्य के बारे में है। तीसरी धारा में विरोधी पक्षकार के प्रति अधिवक्ताओं के कर्त्तव्य के बारे में नियम दिए गये हैं। चौथी धारा में सहयोगियों के प्रति अधिवक्ताओं के कत्तव्य विहित किए गए हैं। पांचवीं धारा में अधिवक्ताओं पर अन्य नियोजनों के बारे में लगाए गए निर्बन्धन अधिकथित किए गए हैं।

19. प्रस्तुत अपील भारत की बार काउन्सिल के नियमों के नियम 36 से संबंधित है। नियम 36 "सहयोगियों के प्रति कर्त्तव्य" शीर्षक के अन्तर्गत चौथी धारा में है। नियम 36 में यह कहा गया है कि "कोई भी अधिवक्ता काम के लिए याचना नहीं करेगा या ऐसे मामलों के संबंध में, जिनमें उसे लगाया गया हो या जिससे वह सम्बद्ध हो, प्रत्यक्षतः, या अप्रत्यक्षतः, परिपत्र, विज्ञापनों, दलालों, व्यक्तिगत संसूचनाओं, व्यक्तिगत संबंधों से असमर्थित साक्षात्कारों द्वारा समाचारपत्र में टिप्पणियां देकर या विज्ञापन हेतु अपना फोटो देकर कोई विज्ञापन नहीं करेगा।

1975(8) eILR(PAT) SC 1

20. विचारार्थ प्रश्न अधिनियम की धारा 38 में आने वाले "भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा दिए गए किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति" शब्दों के अर्थ के बारे में है। यह ध्यान दिए जाने योग्य बात है कि धारा 37 में राज्य के महाधिवक्ता और धारा 38 में यथास्थिति महान्यायवादी या राज्य के महाधिवक्ता को अपील करने के लिए विनिर्दिष्ट अधिकार दिए गए हैं। ये अधिकार इस अधिनियम में 1973 के संशोधन अधिनियम 60 द्वारा सन् 1974 में किए गए संशोधनों द्वारा जोड़े गए थे।

21. **अदि फिरोजशाह गान्धी** बनाम **एच० एम० सीरवाई, महाराष्ट्र के महाधिवक्ता, मुम्बई**[1] के मामले में जिस प्रश्न पर विचार किया गया था वह यह था कि क्या भारत की बार काउन्सिल के समक्ष महाराष्ट्र के महाधिवक्ता द्वारा फाइल की गई अपील सक्षम थी। बहुमत का दृष्टिकोण यह था कि राज्य का महाधिवक्ता भारत की बार काउन्सिल के समक्ष अपील फाइल करने के लिए सक्षम नहीं है। **महाराष्ट्र वाले मामले** में[1] राज्य बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति का यह समाधान हो गया था कि अदि फिरोजशाह गान्धी को वृत्तिक अवचार या अन्य अवचार का दोषी ठहराए जाने के लिए कोई कारण नहीं थे। महाराष्ट्र के महाधिवक्ता ने भारत की बार काउन्सिल के समक्ष अपील फाइल की थी। अपीलार्थी ने भारत की बार काउन्सिल के समक्ष महाधिवक्ता के सुने जाने के अधिकार (Locus standi) पर आपत्ति की थी। वह आपत्ति नामंजूर कर दी गई थी और महाधिवक्ता द्वारा फाइल की गई अपील को भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा मंजूर कर लिया गया था। भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति ने अधिवक्ता अदि फिरोज़शाह गान्धी को अवचार का दोषी ठहराया और उसे विधि व्यवसाय करने से एक वर्ष के लिए निलम्बित कर दिया। अधिवक्ता ने अधिनियम की धारा 38 के अधीन इस न्यायालय में अपील फाइल कर दी। बहुमत के विनिश्चय की दृष्टि से अदि फिरोजशाह गान्धी द्वारा फाइल की गई अपील इस न्यायालय द्वारा इस आधार पर स्वीकार की गई थी कि महाराष्ट्र का महाधिवक्ता अपील फाइल

---

[1] (1971) 1 एस० सी० आर० 863.

करने के लिए अक्षम है। इस पृष्ठभूमि में अधिनियम की धारा 37 और 38 में उक्त संशोधन किए गए थे जिनमें राज्य के महाधिवक्ता और भारत के महान्यायवादी को क्रमशः धारा 37 और 38 के अधीन अपील करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

22. प्रत्यर्थियों ने **अदि फिरोशाह गान्धी के मामले**[1] में इस न्यायालय के विनिर्णय का प्रतिरोध किया कि राज्य की बार काउन्सिल इन कारणों से अपनी अनुशासनिक समिति के विनिश्चय के विरुद्ध अपील करने के लिए व्यथित व्यक्ति नहीं है। पहला कारण यह है कि राज्य बार काउन्सिल व्यथित व्यक्ति नहीं है क्योंकि बार काउन्सिल को कोई विधिक व्यथा नहीं हुई है और भारत की बार काउन्सिल के विनिश्चय से राज्य की बार काउन्सिल को किसी भी बात से वंचित नहीं किया है। दूसरा कारण यह है कि इस अभिकथन से कि भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति का आदेश सदोष किया गया है, स्वतः राज्य की बार काउन्सिल को कोई व्यथा नहीं हुई। वह व्यक्ति उक्त आदेश से व्यथित होना चाहिए, न कि उससे होने वाले परिणामों से। तीसरा कारण यह है कि राज्य बार काउन्सिल का यह कर्त्तव्य नहीं है कि वह भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति की किसी अभिकथित गलती को ठीक करने का प्रयत्न करे। इसका कारण यह है कि राज्य की बार काउन्सिल पर, विधि द्वारा कोई भी ऐसा कर्त्तव्य अधिरोपित अथवा डाला नहीं गया है। चौथा कारण यह है कि किसी व्यक्ति को किसी आदेश से व्यथित तब कहा जा सकता है जब वह उसके लिए आर्थिक रूप से या अन्यथा अपायकर हो या जिससे उस पर किसी न किसी रूप में कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो। पांचवां कारण यह है कि राज्य की बार काउन्सिल भारत की बार काउन्सिल के अधीनस्थ है अतः वह वरिष्ठ निकाय के किसी आदेश के विरुद्ध अपील करने के लिए सक्षम नहीं है। अंतिम कारण यह है कि अपील महाधिवक्ता या भारत के महान्यायवादी द्वारा फाइल की जा सकती थी जिन्हें अपील फाइल करने का अधिकार है, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं करना चाहा।

23. अधिनियम की स्कीम और उपबंधों से यह उपदर्शित होता है कि राज्य बार काउन्सिलों और भारत की बार काउन्सिल का गठन इस प्रमुख

---

[1] (1971) 1 एस० सी० आर० 863.

प्रयोजन से किया गया है कि भारत की बार काउन्सिल द्वारा अधिकथित वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों का पालन किया जाए और उन्हें बनाए रखा जाए। अतः बार काउन्सिलें अधिवक्ताओं के विरुद्ध अवचार के मामले ग्रहण करती हैं। बार काउन्सिलें अधिवक्ताओं के अधिकारों, विशेषाधिकारों और हितों की रक्षा करती हैं। बार काउन्सिल निगमित निकाय है। अनुशासनिक समितियां बार काउन्सिल द्वारा गठित की जाती हैं। बार काउन्सिल अपनी अनुशासनिक समिति जैसा ही निकाय नहीं होता। अधिवक्ताओं के वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों की बाबत बार काउन्सिल के प्रमुख कृत्यों में से एक कृत्य अधिवक्ताओं के विरुद्ध शिकायतें प्राप्त करना है और यदि बार काउन्सिल को यह विश्वास करने का कारण है कि कोई अधिवक्ता वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी है तो वह मामले को निपटाने के लिए अपनी अनुशासनिक समिति को निर्देशित करेगी। राज्य की बार काउन्सिल भी स्वप्रेरणा से, यदि उसे यह विश्वास करने का कारण है कि कोई अधिवक्ता वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी है तो वह मामले को निपटाने के लिए अपनी अनुशासनिक समिति को निर्देशित करेगी। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि राज्य बार काउन्सिल न केवल शिकायत ही प्राप्त करती है बल्कि उससे यह स्वयं अपेक्षा की जाती है कि वह यह पता लगाने के लिए ध्यान दे कि क्या यह विश्वास करने का कोई कारण है कि कोई अधिवक्ता वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी है। राज्य की बार काउन्सिल उस सकारण विश्वास के आधार पर कार्य करती है। बार काउन्सिल को प्रथमतः, शिकायतें ग्रहण करने और द्वितीयतः, वृत्तिक या अन्य अवचार के दोष के बारे में सकारण विश्वास करने और अन्ततः मामले को अपनी अनुशासनिक समिति को निर्देशित करने के संबंध में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। अनुशासनिक समिति के समक्ष कार्यवाहियां राज्य की बार काउन्सिल द्वारा शुरू की जाती हैं। सब से अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि कोई भी मुकदमेबाज और जनता का कोई भी सदस्य सीधे ही किसी अधिवक्ता के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियां शुरू नहीं कर सकता। राज्य की बार काउन्सिल ही अनुशासनिक कार्यवाहियां शुरू करती है।

24. "भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा किये गये आदेश से व्यथित व्यक्ति" शब्दों का अर्थ जानने के लिए सब से

पहले दो मुख्य बातें ध्यान में रखनी होती हैं। प्रथमतः अनुशासनिक समिति के समक्ष कार्यवाहियों में कोई वाद नहीं होता। जब अनुशासनिक समिति किसी अधिवक्ता को धिग्दण्ड देने की या अधिवक्ता को विधि व्यवसाय करने से निलम्बित करने की या अधिवक्ता का नाम हटाने की शक्ति का प्रयोग करती है तब समिति पक्षकारों के बीच किसी वाद का विनिश्चय नहीं करती है। जब बार काउन्सिल अनुशासनिक समिति के समक्ष कोई मामला रखती है तब वह किसी दाण्डिक मामले में अभियोजक के रूप में कार्य नहीं करती। जो परिवादी किसी अधिवक्ता के विरुद्ध शिकायत करता है वह किसी सिविल वाद में वादी के समान नहीं होता। बार काउन्सिल द्वारा शिकायत की इस बात को जानने के लिए परीक्षा की जाती है कि क्या यह विश्वास करने का कोई कारण है कि कोई अधिवक्ता अवचार का दोषी है। बार काउन्सिल ऐसी जानकारी के आधार पर, जो उसे अपने कर्त्तव्यों के अनुक्रम में प्राप्त हुई हो, स्वप्रेरणा से कार्यवाही कर सकती है। द्वितीयतः अनुशासनिक कार्यवाहियों का कोई पक्षकार नहीं होता। ऐसा इसलिए है क्यों कि यथास्थिति बार काउन्सिल, महान्यायवादी, महाधिवक्ता, ये सभी अधिवक्ताओं के हितों और जनता के हितों की रक्षा करने का कार्य करते हैं। इस प्रकार कार्य करते समय अधिवक्ता और किसी अन्य व्यक्ति के बीच कोई परस्पर विरोध नहीं होता। इसका कारण यह है कि वृत्तिक आचरण, वृत्तिक शिष्टाचार, वृत्तिक आचारनीति और वृत्तिक सदाचार जैसी बातों को कायम रखा जाना होता है जिनके अतिक्रमण के परिणामस्वरूप अधिवक्ता को धिग्दण्ड दिया जाता है या विधि व्यवसाय करने से उसे निलम्बित किया जाता है या नामावली से उसका नाम काट दिया जाता है।

25. अधिवक्ताओं के आचरण की बाबत राज्य बार काउन्सिल द्वारा गठित अनुशासनिक समिति के मुकाबले राज्य बार काउन्सिल महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रथमतः, अधिनियम की धारा 35(1-ए) के अधीन राज्य बार काउन्सिल या तो स्वप्रेरणा से या किसी हितबद्ध व्यक्ति द्वारा किए गए आवेदन पर अपनी अनुशासनिक समिति के समक्ष लम्बित किसी कार्यवाही को वापस ले सकती है और यह निर्देश दे सकती है कि जांच राज्य बार काउन्सिल की किसी अन्य अनुशासनिक समिति द्वारा की जाए। इससे यह उपदर्शित होता है कि राज्य बार काउन्सिल को

किसी प्रकार की निगरानी रखनी होती है। उसका कार्य किसी मामले को अनुशासनिक समिति के समक्ष रखने भर से ही समाप्त नहीं हो जाता। इस उपबंध से एक ओर तो इस विषय में राज्य बार काउन्सिल का शाश्वत हित और दूसरी ओर उस वृत्तिक आचारनीति की रक्षा करने का कर्त्तव्य, जो उसे सौंपा गया है, दर्शित होता है। द्वितीयतः, अधिनियम की धारा 36(2) के अधीन राज्य बार काउन्सिल भारत की बार काउन्सिल को किसी राज्य बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के समक्ष किसी अधिवक्ता के विरुद्ध लंबित अनुशासनिक कार्यवाही को वापस लेने के लिए रिपोर्ट कर सकती है। इन उपबंधों से यह उपदर्शित होता है कि राज्य बार काउन्सिल द्वारा किसी मामले को भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति के समक्ष रख दिए जाने के पश्चात् वह कार्यवाहियां बंद कर देता है। कार्यवाही के ये अनुक्रम प्रक्रिया संबंधी हैं। ये बातें राज्य बार काउन्सिल को अनुशासनिक समिति के विनिश्चयों पर विचार करने के लिए कोई शक्ति नहीं देती है। राज्य बार काउन्सिल को अधिनियम के अधीन किसी एक अनुशासनिक समिति से कार्यवाहियां वापस लेने के लिए और उसे किसी अन्य समिति को देने के लिए या भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति द्वारा अवधारण किए जाने हेतु राज्य से अनुशासनिक कार्यवाहियां वापस लेने के लिए सशक्त किए जाने के कारण यह है कि राज्य बार काउन्सिल सदैव आचरण विषयक स्तरों में मलिनता के विरुद्ध व्यवसाय को बनाए रखने के कार्य में हितबद्ध रहती है। बार काउन्सिल उत्कृष्ट व्यवसाय से संबद्ध व्यक्तियों द्वारा वृत्तिक आचारनीति के अनुपालन की बाबत वकीलों और जनता का सामूहिक प्रतिनिधित्व करती है।

26. "व्यथित व्यक्ति" शब्द अनेक कानूनों में पाये जाते हैं। "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का अर्थ कानून के प्रयोजन और उसके उपबंधों के प्रति निर्देश से अभिनिश्चित करना होगा। कभी-कभी यह कहा जाता है कि "व्यथित व्यक्ति" शब्द सुने जाने के अधिकार की, जो न्यायिक उपायों के संबंध में उत्पन्न होता है, अपेक्षा के समरूप होते हैं।

27. जहां किसी प्रशासनिक या न्यायिक विनिश्चय के विरुद्ध न्यायालयों में अपील करने का अधिकार कानून द्वारा सृष्ट होता है वहां

1975(8) eILR(PAT) S

ऐसा अधिकार निश्चित ही किसी व्यथित व्यक्ति या ऐसे व्यक्ति तक ही सीमित होता है जो व्यथित होने का दावा करता है। "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का अर्थ कानून के संदर्भ के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकता है। इसका एक अर्थ यह है कि किसी व्यक्ति का किसी विनिश्चय से व्यथित उस समय माना जायेगा यदि उक्त विनिश्चय तात्विक रूप से उसके विरुद्ध हो। सामान्यतः ऐसे व्यक्ति को यह सिद्ध करना होता है कि "व्यथित व्यक्ति" बनने के लिये उसे किसी ऐसी बात से इंकार या वंचित किया गया है जिसके लिये वह वैध रूप से हकदार होता है। इसके अतिरिक्त कोई व्यक्ति उस समय व्यथित होता है यदि उस पर कोई विधिक भार अधिरोपित किया जाता है। "व्यथित व्यक्ति" शब्दों के अर्थ को कभी-कभी कुछ ऐसे कानूनों में सीमित अर्थ दिया जाता है जिनमें प्राइवेट विधिक अधिकारों के संरक्षण के लिये उपायों की व्यवस्था की गई होती है। सीमित अर्थ से विधिक अधिकारों से इंकार करना या उनसे वंचित किया जाना अपेक्षित है। उन कानूनों की पृष्ठभूमि में, जो संपत्ति अधिकारों के बारे में नहीं है बल्कि वृत्तिक आचरण और सदाचार के बारे में है, और अधिक उदार दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत होती है। एडवोकेट्स ऐक्ट के अधीन बार काउन्सिल की भूमिका की तुलना वृत्तिक आचारनीति में संरक्षक की भूमिका के साथ की जा सकती है। अधिनियम की धारा 37 और 38 में "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का व्यापक अर्थ है और उनका निर्वचन विधिक अधिकार रखने या उनसे वंचित किये जाने अथवा वित्तीय हितों के भार तक ही सीमित नहीं किया जाना चाहिये। इसकी कसौटी यह है कि क्या "व्यथित व्यक्ति" शब्दों के अन्तर्गत "ऐसा व्यक्ति भी आता है जिसकी यह यथार्थ शिकायत है कि क्योंकि ऐसा आदेश दिया गया है जो उसके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।" अतः इस बात का पता लगाना होता है कि क्या बार काउन्सिल को वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार पर प्रभाव डालने वाले किसी आदेश या विनिश्चय की बाबत कोई शिकायत है।

28. प्रमुख प्रश्न यह है कि बार काउन्सिल के हित क्या हैं? बार काउन्सिल के हित वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों को बनाए रखना है। बार काउन्सिल का कोई निजी या धन सम्बन्धी हित नहीं होता। यह देखना बार काउन्सिल का कानूनी कर्त्तव्य और हित होता

है कि वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के संबन्ध में भारत की बार काउन्सिल द्वारा अधिकथित नियमों का पालन किया जाए और उनका कोई अतिक्रमण न किया जाए। बार काउन्सिल वृत्तिक आचार संहिता के प्रहरी के रूप में कार्य करती है और अधिवक्ताओं के अधिकारों और विशेषाधिकारों तथा इस व्यवसाय की शुद्धता और गरिमा के साथ महत्वपूर्ण रूप से हितबद्ध होती है।

29. बार काउन्सिल का हित वृत्तिक आचरण और इस व्यवसाय में शिष्टाचार के स्तरों का बनाए रखना होता है जो अखण्डता और परस्पर विश्वास पर आधारित होता है। बार काउन्सिल उत्कृष्ट व्यवसाय की उच्च परम्पराओं के अभिरक्षक के रूप में कार्य करती है। बार काउन्सिल की शिकायत पर वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों के दृष्टिकोण से विचार किया जाना चाहिए। यदि भारत की बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति का कोई विनिश्चय राज्य बार काउन्सिल के अनुसार ऐसा है जो इन स्तरों को कम करने वाला है और इस व्यवसाय की उच्च परम्पराओं और महत्ता को खतरे में डालने वाला है, तो राज्य बार काउन्सिल जनता के हितों को, व्यवसाय के हितों की और बार के हितों की रक्षा करने के लिए व्यथित व्यक्ति है।

30. बार काउन्सिल निम्नलिखित कारणों से "व्यथित व्यक्ति" है। प्रथमतः अधिनियम में "व्यथित व्यक्ति" शब्दों का कानून के प्रयोजन और उपबन्धों के संदर्भ में व्यापक अर्थ है। अनुशासनिक समिति के समक्ष अनुशासनिक कार्यवाहियों में कोई वाद नहीं है और उसमें कोई पक्षकार नहीं हैं। अतः 'व्यक्ति' शब्द के अन्तर्गत बार काउन्सिल भी आएगी जो राज्य की बार का प्रतिनिधित्व करती है। द्वितीयतः बार काउन्सिल 'व्यथित व्यक्ति' है क्योंकि वह वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के स्तरों की सामूहिक अन्तर्भावना को प्रदर्शित करती है। बार काउन्सिल व्यवसाय की शुद्धता और गरिमा के संरक्षक के रूप में कार्य करती है। तृतीयतः, अधिवक्ताओं के विरुद्ध शिकायतें ग्रहण करने के पश्चात् बार काउन्सिल का कृत्य यह होता है कि जब बार काउन्सिल को युक्तियुक्त विश्वास हो कि अवचार का प्रथमदृष्टया मामला मौजूद है तब वह अनुशासनिक समिति को ऐसी जांच सौंपती है। जब एक बार जांच आरम्भ हो जाती है तब बार

काउन्सिल का उसके विनिश्चय में कोई नियंत्रण नहीं रहता। बार काउन्सिल उसे किसी अन्य अनुशासनिक समिति को सौंप सकती है या बार काउन्सिल भारत की बार काउन्सिल को अपनी रिपोर्ट भेज सकती है। इससे यह उपदर्शित होता है कि बार काउन्सिल इस व्यवसाय के अनुशासन, गरिमा और शिष्टाचार का प्रतिपादन करने के लिए सदैव कार्यवाहियों में हितबद्ध होती है। चतुर्थतः, अनुशासनिक समिति के विनिश्चय को अधिनियम के अधीन उपबंधित अपीलों के अनुसार ही ठीक किया जा सकता है। जब बार काउन्सिल अवचार के मामलों को अनुशासनिक समिति को निर्देशित करके कार्यवाहियां शुरू करती है तब बार काउन्सिल अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का पालन करते हुए यह देखने के कार्य में हितबद्ध होती है कि अधिवक्ता इस व्यवसाय के उचित स्तर और शिष्टाचार को बनाए रखते हैं। पांचवें बार काउन्सिल महत्वपूर्ण रूप से बार काउन्सिल के कृत्यों के संदर्भ में उसके विनिश्चय से संबन्धित होती है। यदि विनिश्चय से वृत्तिक आचरण और आचारनीति के स्तरों को बनाए रखने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तो बार काउन्सिल को उसके विरुद्ध शिकायत होगी।

31. इन कारणों से हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि बार काउन्सिल अधिनियम के अधीन अपील करने के लिए "व्यथित व्यक्ति" है।

32. अब इन अपीलों की गुणागुणों के आधार पर खंड न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की जाएगी।

न्यायाधिपति बेग—

33. मैं न केवल माननीय मुख्य न्यायाधिपति द्वारा निकाले गए निष्कर्ष और उसके समर्थन में दिए गए कारणों से सहमत ही हूं बल्कि मेरा यह विचार है कि हम यह अभिनिर्धारित कर सकते हैं और हमें यह अभिनिर्धारित करना भी चाहिए कि बार काउन्सिल और अभिकथित दोषी अधिवक्ताओं के, जिन्हें राज्य बार काउन्सिल की कार्यपालिका समिति द्वारा भेजी गई शिकायतों के आधार पर उन कार्यों के लिए, जिन्हें वृत्तिक अवचार के कार्य बताया गया था, अपनी अनुशासनिक समिति के समक्ष घसीटा गया था, बीच वस्तुतः "वाद" था।

34. विद्वान् मुख्य न्यायाधिपति ने बहुत ही स्पष्ट रूप से और सूक्ष्म रूप से इस बात के कारण बताए हैं कि क्यों राज्य बार काउन्सिल राज्य की बार के सदस्यों के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियों में दिए गए आदेशों के विरुद्ध अपील करने के लिए हकदार "व्यथित व्यक्ति" राज्य बार काउन्सिल राज्य की बार का प्रतिनिधित्व करती है। वह बार के सदस्यों के "विवेक का पालक" और हितों का संरक्षक होती है। वह "व्यवसाय की शुद्धता और गरिमा के संरक्षक के रूप में कार्य करती है।" अनुशासनिक कार्यवाहियों के संबन्ध में उसका कृत्य अधिवक्ताओं के विरुद्ध शिकायतें ग्रहण करना है और जब अवचार का कोई प्रथमदृष्ट्या मामला हो तब अपनी अनुशासनिक समिति को शिकायत भेजकर कार्यवाहियां शुरू करना है। उसका हित यह देखना होता है कि राज्य की बार के सदस्यों के विरुद्ध अवचार के अभिकथनों वाले मामलों में सही विनिश्चय दिए जाते हैं। मेरे विद्वान भ्राता कृष्ण अय्यर ने इस हित के व्यापक क्षेत्र और उसके सामाजिक महत्व एवं आयाम के बारे में बताया है।

35. राज्य बार काउन्सिल का गठन मुख्यतः राज्य के अधिवक्ताओं में से निर्वाचित सदस्यों से मिलकर होता है। इसके कानूनी कृत्य एडवोकेट्स ऐक्ट, 1961 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 6 में दिए गए हैं। उनमें से यहां हमारा विशेष रूप से संबंध अधिनियम की धारा 6(1) के खंड (सी) और (डी) से है, जो इस प्रकार हैं--

*"(सी) अपनी नामावली के अधिवक्ताओं के विरुद्ध अवचार के मामले ग्रहण करना और अवधारित करना ;

(डी) अपनी नामावली के अधिवक्ताओं के अधिकारों, विशेषाधिकारों और हितों की रक्षा करना ;"

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है---

"(c) to entertain and determine cases of misconduct against advocates on its roll;

(d) to safeguard the rights, privileges and interests of advocates on its roll;"

36. अधिनियम की धारा 9 के अधीन राज्य बार काउन्सिल अपनी अनुशासनिक समिति का गठन करती है जिसमें "तीन व्यक्ति सम्मिलित होते हैं जिनमें से दो व्यक्ति काउन्सिल द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित किए जाएंगे और तीसरा व्यक्ति काउन्सिल द्वारा ऐसे अधिवक्ताओं में से, जो विनिर्दिष्ट अर्हताएं रखते हों सहयोजित किया जाएगा।" धारा 10 के अधीन वह पांच सदस्यीय कार्यपालिका समिति और तीन सदस्यीय एक नामांकन समिति निर्वाचित करती है। इस प्रकार राज्य बार काउन्सिल अपनी समितियों के माध्यम से कार्य करती है। प्रत्येक समिति के सुभिन्न और पृथक कृत्य होते हैं। अतः प्रत्येक की बाबत यह कहा जा सकता है कि उसका अपना "व्यक्तित्व" (परसोना) होता है और अपनी अलग पहचान होती है जिसका सम्पूर्ण बार काउन्सिल से अन्तर प्रकट किया जा सकता है। निस्संदेह, प्रत्येक समिति बार काउन्सिल की ओर से कार्य करती है किन्तु उसके सदस्यों के भिन्न-भिन्न होने की संभावना होती है हालांकि ऐसा अनिवार्य नहीं है। जो भी हो, जब राज्य बार काउन्सिल ने अधिनियम की धारा 35 के अधीन अपनी अनुशासनिक समिति को कोई मामला भेजा हो तब वह समिति स्वतंत्र और निष्पक्ष प्राधिकारी के रूप में कार्य करती है जो शिकायत का विचारण करती है और या तो उसे खारिज कर देती है या कार्यवाहियां फाइल किए जाने का निदेश देती है या अधिवक्ता को दोषी पाए जाने पर उसे या तो धिग्दण्ड देकर, या विनिर्दिष्ट अवधि तक विधि व्यवसाय करने से निलम्बित करके या अधिवक्ताओं की नामावलि से उसका नाम काटने का आदेश देकर दण्डित करती है। वास्तव में अधिनियम की धारा 42(1) अनुशासनिक समिति को सिविल प्रक्रिया संहिता के अधीन सिविल न्यायालय की शक्तियां प्रदान करती है और धारा 42(2) में यह अधिनियमित किया गया है कि उसकी कार्यवाहियों को उसमें वर्णित प्रयोजनों के लिए न्यायिक कार्यवाहियां समझा जाएगा।

37. शिकायत के विचारण के समय महाधिवक्ता और उस अधिवक्ता को जिसका उसके द्वारा विचारण किया जाता है, सुनवाई के अवसर अवश्य दिए जाने चाहिएं। ऐसा इसलिए किया जाना होता है क्योंकि इसमें ऐसे विवाद और परस्पर विरोधी हित तथा बातें होती हैं जिन पर अनुशासनिक समिति को अपना विनिश्चय देने होते हैं।

महाधिवक्ता या तो स्वयं या अपना प्रतिनिधित्व करने वाले अधिवक्ता की मार्फत हाजिर हो सकता है। वह संभवतः लोक हित तथा उस विधि व्यवसाय के जिसका वह राज्य में औपचारिक रूप से प्रधान होता है, हितों का प्रतिनिधित्व करता है। यह सही है कि अधिनियम की धारा 35 में राज्य बार काउन्सिल को पक्षकार बनाने के लिए कोई भी उपबन्ध नहीं है। राज्य बार काउन्सिल अपनी कार्यपालिका शाखा की ओर से अपनी अनुशासनिक समिति को मामला भेजकर कार्यवाहियां शुरू करती है। किन्तु, यदि बार काउन्सिल का अधिनियम की धारा 6(1) (डी) में विनिर्दिष्ट रूप से वर्णित बार के सदस्यों के अधिकारों और विशेषाधिकारों के संरक्षक के रूप में कोई पृथक किए जाने योग्य हित है तो ऐसा कोई भी कारण नहीं है कि अधिनियम की धारा 37 के अधीन अपील करने पर या इसके अतिरिक्त अधिनियम की धारा 38 के अधीन इस न्यायालय में अपील करने पर स्वयं अपनी अनुशासनिक समिति के समक्ष तथा भारत की बार काउन्सिल के समक्ष इस हित का प्रतिनिधित्व करने के अधिकार से उसे क्यों वंचित किया जाए। न तो अधिनियम की धारा 37 में और न ही धारा 38 में राज्य बार काउन्सिल का एक पृथक सत्ता के रूप में उल्लेख किया गया है। तथापि, जैसा कि हम अभिनिर्धारित कर रहे हैं यदि उसे सुनवाई का अधिकार और ऐसी कार्यवाहियों के परिणामों से प्रभावित "व्यथित व्यक्ति" के अधिकार प्राप्त हो सकते हैं तो मुझे इस बात का कोई कारण दिखाई नहीं देता कि हम ऐसा क्यों नहीं कह सकते कि वह स्वयं अपने और अभिकथित दोषी अधिवक्ता के बीच किसी वाद या 'विवाद के, जिसके विनिश्चय के लिए कार्यवाहियां की गई हैं, पक्षकार की स्थिति में है।

38. "लिस" शब्द किसी न्यायालय में 'वाद के माध्यम से की जाने वाली मुकदमेबाजी तक ही सीमित नहीं है। **बटलर** बनाम **माउण्ट-गारेट**[1] के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "लिस" का रूप देने के लिए वाद आवश्यक नहीं है। उस मामले में यह बताया गया था कि कोई ऐसा कौटुम्बिक संविवाद, जिसकी मुकदमेबाजी की जा सकती हो, वाद का प्रारम्भ (लिस मोटा) है। **बी० जॉन्सन एण्ड कम्पनी (बिल्डर्स)** बनाम **मिनिस्टर ऑफ हैल्थ**[2] के

---

[1] 7 एच० एल० सी० ए० 641.

[2] (1947) 2 ऑल इंग्लैण्ड रिपोर्ट्स 395–399.

1975(8) eILR(PAT) SC 1

मामले में माननीय ग्रीन, एम० आर०, ने यह मत व्यक्त किया था कि "लिस से ऐसे विवाद्यक का विचार विवक्षित होता है जो दो पक्षकारों के बीच हो। किसी लिस का विनिश्चय उस विवाद्यक का विनिश्चय होता है।"

39. यदि राज्य बार काउन्सिल को अपनी कार्यपालिका समिति की मार्फत कार्य करते हुए कोई ऐसा प्रथमदृष्टया मामला मिलता है जो उसकी अनुशासनिक समिति को भेजे जाने और उसके द्वारा विचारण किए जाने योग्य हो, तो वह अभियोजक अभिकरण के कृत्य करती है। वह ऐसा अपनी नामावली पर के संपूर्ण अधिवक्ताओं के, जो किसी अधिवक्ता के अवचार से प्रभावित होते हैं, "अधिकारों, विशेषाधिकारों और हितों" की रक्षा करने के लिए अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करते हुए करता है। अतः उसके और अवचार के दोषी अधिवक्ता विशेष के बीच विचारण योग्य विवाद्यक होते हैं। अतः मुझे यह प्रतीत होता है कि हम यह अभिनिर्धारित कर सकते हैं और हमें यह अभिनिर्धारित करना चाहिए कि राज्य बार काउन्सिल, अपनी कार्यपालिका हैसियत में, अपनी कार्यपालिका समिति की मार्फत अभियोजक के रूप में कार्य करती है। राज्य बार काउन्सिल को अनुशासनिक समिति में, जो अपनी न्यायिक शाखा का प्रतिनिधित्व करती है और ऐसे निष्पक्ष न्यायाधीश के रूप में कार्य करती है जिसके विनिश्चय राज्य बार काउन्सिल पर आबद्धकर होते हैं, कोई असंबद्धता नहीं है। यदि हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि कोई बार काउन्सिल अपनी अनुशासनिक समिति के विनिश्चय से असंतुष्ट होकर उस विनिश्चय के विरुद्ध अपील कर सकती है तो मेरा विचार है कि हमें उसके तर्कसंगत स्वाभाविक परिणाम के रूप में यह भी अभिनिर्धारित करना होगा कि वह 'लिस' की पक्षकार है। हमारे इस मत से कि वह अधिनियम की धारा 37 और 38 में यथा प्रयुक्त 'व्यथित व्यक्ति' अभिव्यक्ति के अर्थान्तर्गत "व्यथित व्यक्ति" है, आवश्यक रूप से यही विवक्षित है।

40. ऊपर कथित किया गया मत राज्य बार काउन्सिल को दो भिन्न-भिन्न हैसियतों––कार्यपालिका हैसियत, जिसमें वह अपनी कार्यपालिका समिति की मार्फत अभियोजक के रूप में कार्य करता है और न्यायिककल्प कृत्य, जिसका वह अपनी अनुशासनिक समिति की मार्फत पालन करता है के बीच अन्तर पर आधारित । यदि हम यह अन्तर कर सकते हैं तो,

जैसा कि मैं समझता हूं कि हम कर सकते हैं, इसमें अभियोजक और न्यायाधीश के बीच कोई विलय नहीं होता । यदि किसी अन्य क्षेत्र से यह दृष्टान्त दिया जाए कि जब राज्य अभियोजित करने के लिए अपने कार्यपालिका अभिकरणों की मार्फत कार्य करता है और उसके उपरान्त किसी मामले को विनिश्चित करने के लिए अपनी न्यायिक शाखा की मार्फत कार्य करता है, तो उससे नैसर्गिक न्याय के किसी नियम का भंग नहीं होता । अभियोजक और न्यायाधीश को एक व्यक्तित्व और दृष्टिकोण वाला नहीं कहा जा सकता क्योंकि दोनों एक ही राज्य के भिन्न-भिन्न पहलुओं या कृत्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

41. ऊपर दिए गए कारणों के आधार पर मुझे राज्य बार काउन्सिल का अपनी नामावली के किसी अधिवक्ता के विरुद्ध, या तो आरम्भ में या अपीली प्रक्रम पर अनुशासनिक कार्यवाही में अपनी कार्यपालिका हैसियत में भाग लेने में कोई भी आपत्ति प्रतीत नहीं होती। इसके पूर्व कि वह किसी ऐसे आदेश द्वारा, जिसके विरुद्ध वह अपील कर सके, "व्यथित व्यक्ति" बन सके, विनिश्चित किए जाने के लिए कोई "लिस" (वाद) या विवाद अवश्य होना चाहिए जिसमें ऐसा आदेश दिया गया हो जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है। ऐसे 'लिस' में राज्य बार काउन्सिल को उसकी कार्यपालिका हैसियत में एक पक्षकार समझा जाना चाहिए। प्रकटतः उसके हितों का महाधिवक्ता द्वारा पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व किया जाता है । अतः यह आवश्यक नहीं समझा गया था कि उसकी अनुशासनिक समिति द्वारा कोई सूचना देकर उसका पृथक प्रतिनिधित्व किया जाए, जैसा कि महाधिवक्ता के मामले में उपबन्ध किया गया है । किन्तु मुझे उसकी अनुशासनिक समिति के समक्ष भी प्रतिनिधित्व करने के मार्ग में वह यदि ऐसा करना चाहे तो भी कोई विधिक बाधा प्रतीत नहीं होती। उसको निश्चित ही प्रत्येक शिकायत की उस समय जानकारी होती है जब वह अपनी अनुशासनिक समिति को कोई शिकायत भेजती है । प्रत्येक अवस्था में, "व्यथित व्यक्ति" के रूप में अपील करने का उसका अधिकार अधिनियम की धारा 37 और 38 के उपबन्धों के अन्तर्गत ठीक-ठीक आ जाता है । यहां यह बता दिया जाता है कि स्वयं प्रत्यर्थियों ने बार काउन्सिल को "लिस" (वाद) में हितबद्ध पक्षकार के रूप में माना है जिससे कि वह प्रत्यर्थियों के, जबकि उन्होंने भारत की बार काउन्सिल के समक्ष की

1975(8) eILR(PAT) SC 1

गई अपनी अपीलों में राज्य बार काउन्सिल को प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया था, विरुद्ध आदेशों के अपास्त किए जाने पर "व्यथित व्यक्ति" बन सके। धारा 38 के अधीन इस न्यायालय में अपील करने के उसके कानूनी अधिकार पर इस तथ्य मात्र से कोई प्रभाव नहीं पड़ा है कि वह भारत के बार काउन्सिल के समक्ष उपसंजात नहीं हुई थी।

न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर--

42. विद्वान् मुख्य न्यायाधिपति द्वारा जो निर्णय दिया गया है उसके प्रति मेरी जो सहमति है वह सिवाय इसके कि जब इसके द्वारा कोई नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जाए या नई सीमाएं खींची जाएं, सामान्यतया पृथक् दीर्घ टिप्पण के रूप में एक विचार-विमर्श मात्र है। भागतः, मेरे अनुपूरक निर्णय में इसका स्पष्टीकरण किया गया है।

43. इस मामले में, आम बोलचाल के दो सरल से शब्दों, अर्थात् "व्यथित व्यक्ति" पद के अर्थान्वयन पर दो दिन लम्बी बहस की गई है। पूर्वप्रमाणसदृश ज्ञान और पारम्परिक दृष्टिकोणों के होते हुए भी, प्रश्नगत पद के अर्थ की कुंजी सरल अंग्रेजी भाषा में तथा कानून की सामाजिक भावना और विधि व्यवसाय की सार्वजनिक पाबन्दी में निहित है, जिसका विनियमन एडवोकेट्स ऐक्ट, 1961 (संक्षेप में अधिनियम) द्वारा किया गया है जिसमें उक्त शब्द आए हैं। विधि मनीषियों के लिए यह आवश्यक है कि सफल होने के लिए उन्हें मात्र शब्द-विवाद में उलझे बिना विधि की जीवन्त शैली पर केन्द्रित होना चाहिए।

44. प्रस्तुत मामले में छोटा सा प्रश्न यह है कि क्या राज्य बार काउन्सिल अधिनियम की धारा 38 के अर्थान्तर्गत "व्यथित व्यक्ति" है जिससे कि उसे भारत की बार काउन्सिल के अनुशासनिक अधिकरण के विनिश्चय के विरुद्ध इस न्यायालय में सुने जाने का अधिकार प्राप्त हो सके। जिसके संबंध में उसने यह दावा किया है कि वह अत्यधिक गलत है और यदि उसे कोई चुनौती नहीं दी जाती है तो इसे इसकी नामावली के बार के सदस्यों के बीच ईमानदारी और सत्यता के स्तरों को बनाए रखने संबंधी उच्च दायित्व और उचित वृत्तिक आचरण के सिद्धान्त विफल हो सकते हैं।

45. मैं तथ्यों को छोड़ते हुए आगे बढ़ता हूं क्योंकि वे विद्वान् मुख्य न्यायाधिपति के निर्णय में उपवर्णित किए जा चुके हैं और यह मत व्यक्त करता हूं कि अनेक अधिवक्ताओं को, जिन्हें प्रत्यर्थियों के रूप में रखा गया है, राज्य बार काउन्सिल के अनुशासनिक अधिकरण द्वारा अनुचित रूप से याचना करने का दोषी पाया गया था किन्तु अपील किए जाने पर राष्ट्रीय बार काउन्सिल के अनुशासनिक निकाय ने उन्हें "वृत्तिक आचरण" विषयक निश्चित दृष्टिकोण के आधार पर दोषमुक्त कर दिया, जिसके कारण राज्य बार काउन्सिल और अखिल भारतीय बार काउन्सिल (आल इण्डिया बार काउन्सिल) तक में खलबली मच गई थी, जिसके परिणामस्वरूप राज्य बार काउन्सिल ने इस न्यायालय में अपील कर दी और अखिल भारतीय बार काउन्सिल ने इस पक्षाधार का सक्रिय रूप से समर्थन किया है।

46. सामान्य सा पद "व्यथित व्यक्ति" न केवल कानूनों और रिट अधिकारिता में ही बार-बार आता है बल्कि इस पर आंग्ल-अमरीकी (ऐंग्लो-अमेरिकन) और भारतीय न्यायालयों में अनेकों स्थितियों और विधायी पर्यावरणों में न्यायिक विचार भी किया गया है। विधि संबंधी ऐसी भाषा के अनिश्चित शब्दार्थों के होते हुए भी, भारतीय विधायी प्रारूपकार आंग्ल भाषा की कला के प्रति अपनी भाषा संबंधी निष्ठा के कारण उन शब्दों का प्रयोग करते रहे और भारतीय न्यायाधीश प्रायः प्राचीन आंग्ल नजीरों से निर्वचन विषयक प्रेरणा लेते रहे। यह "अंगीकृत" प्रारूपण और निर्वचन विषयक प्रयोग कभी-कभी उस समय अनुपयुक्त भी हो जाते हैं जब समय और देश में परिवर्तन हो जाता है तथा संदर्भ और कानून के पाठ में अन्तर हो जाता है। मैं इस पहलू पर इसलिए अधिक जोर दे रहा हूं क्योंकि भारत में न्यायालयों का अधिकांश समय इन विदेशी अर्थान्वयनों का अधिक और कभी-कभी यन्त्रवत् रूप से अवलम्ब लेने में और विधायी सरलता प्रतिपादित न करने तथा निर्वचन विषयक गूढ़ता से बचने में ही व्यतीत हो जाता है। विशेषकर ऐसे समय में जबकि हमारे न्यायालयों पर विलम्बित निर्णयों और गूढ़ आदेशिकाओं सम्बन्धी आक्षेप किया जा रहा हो तब यह आवश्यकता और भी अधिक अनिवार्य हो जाती है। अन्यथा "व्यथित व्यक्ति" जैसे सरल से पद को स्पष्ट करने में दो महत्वपूर्ण दिवस व्यर्थ क्यों नष्ट किए गए।

1975(8) eILR(PAT) SC

47. यहां तक कि इंग्लैण्ड में भी, एक विख्यात संसदीय प्रारूपकार फ्रांसिस बेनियन ने हाल ही में कड़ी विधि के विरुद्ध मैनचेस्टर गार्डियन में यह दलील दी है कि "स्वतन्त्र समाज के लिए मूलभूत रूप से यह बात महत्वपूर्ण है कि विधि सरलतापूर्वक अवधारण किए जाने योग्य और युक्तियुक्त रूप से स्पष्ट होनी चाहिए नहीं तो वह उत्पीड़नकारी हो जाएगी और नागरिक को उसके आधारभूत अधिकार से वंचित कर देगी ।" यह भी अनावश्यक रूप से खर्चीली और अपव्ययपूर्ण है। विख्यात अमरीकी प्रारूपकार रीड डिकरसन ने यह मत व्यक्त किया था कि "ऐसी विधि के कारण सरकार को और जनता को लाखों डालरों का वार्षिक खर्च उठाना पड़ता है ।" इंग्लैण्ड की रेण्टन कमेटी ने प्रारूपण सुधार के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट दी है किन्तु यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि भारत इस समस्या से अनभिज्ञ है और जबकि देश में विधि का अशिक्षित जनता द्वारा अधिक उपयोग किया जाता है और विधि का नियम हमारी सांविधानिक व्यवस्था के लिए आधारभूत है तब स्वतन्त्रता-पश्चात् कानून में, जैसे एडवोकेट्स ऐक्ट में, विधायकगण अब तक इन प्रारूपण सम्बन्धी गूढ़ताओं में फंसे हुए हैं और न्यायाधीशों को यह भाषा सम्बन्धी खेल खेलने के लिए विवश होना पड़ता है ।

48. अब हम विवाद्यक पर आते हैं। क्या राज्य बार काउन्सिल 'व्यथित व्यक्ति' है ? इस सम्बन्ध में किसी भी संकीर्ण, पाण्डित्यदर्शी, तकनीकी या सदियों से चले आ रहे अर्थान्वयन का अन्धानुकरण नहीं किया जा सकता । इसके विपरीत, ऐसे युक्तियुक्त अर्थान्वयन का, जिसमें सामाजिक विवेक और अधिनियमिति के उपयोगी प्रयोजन भी बताए गए हों, न्यायिक प्रयास करते समय अवलम्ब लिया जाना चाहिए । ऐसा दृष्टिकोण लेने पर, 'व्यथित व्यक्ति' शब्दों के अर्थ के व्यापक आशय और विस्तार के अन्तर्गत राज्य बार काउन्सिल भी आएगी, जिसके लिए मैं अब कारण बताऊंगा ।

49. प्रत्येक कानून का व्यक्तित्व और संदेश होता है। ऐसे शब्दों और पदों के, जो अन्यथा सरल होते हैं, दुर्बोध जाल और कभी-कभी कानून के पेचों को सुलझाते समय न्यायिक निर्वचन कठोर और निष्फल प्रयोग नहीं होता है बल्कि विधान की स्कीम को सम्पूर्ण रूप से जानने के लिए उसके सामाजिक ढांचे पर विचार किया जाना चाहिए और उसके

स्पष्ट आशय को समझना चाहिए । यही जीवन्त दृष्टिकोण विधि के प्रति न्याय कर सकता है। यहां हमारा सम्बन्ध राष्ट्रीय बार के विधायी परिधान से है, उसकी कानूनी स्वायत्तता, निर्वाचन-सापेक्ष ढांचा, लोक कृत्य, आन्तरिक विनियमन और अन्ततोगत्वा ऐसी दशा में, जहां सदाचरण के सिद्धान्तों का दोषी वकीलों द्वारा भंग किया जाना अभिकथित हो, उच्चतम न्यायालय में अपील करने की व्यवस्था क्या है और उसमें क्या विहित किया गया है । इस संक्षेप विवरण से यह दर्शित होगा कि बार काउन्सिल को राज्य और राष्ट्रीय स्तरों पर कितनी स्पन्दनशील और उत्तरदायित्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है और कोई भी ऐसा निर्वचन, जो बार काउन्सिल की इस पर्यवेक्षणीय हैसियत को कम करने वाला हो, इस संस्था के बुनियादी सिद्धान्त के विरुद्ध होगा । बार काउन्सिल का सर्वोपरि सम्बन्ध वकील, जनता और वृत्तिक उत्तरदायित्व से होता है । ऐसी कोई भी बात जो इस पद्धति को चोट पहुंचाती हो वह उनके लिए एक सामाजिक आघात, विधिक व्यथा और सामाजिक क्षति होती है। तथापि, "विधिज्ञ शक्ति" (लॉयर पावर) का अस्तित्व केवल कुछ व्यक्तियों की अधिकतम आय और कानूनी एकाधिकार की सुरक्षा पर नहीं बल्कि उच्च न्यायालय द्वारा मार्गच्युत और दोषी व्यक्तियों की छानबीन करने और दूर करने तथा अधिकांश व्यक्तियों के सदाचार पर निर्भर होता है ।

50. अब हमें समाज में विधि व्यवसाय से की जाने वाली महत् प्रत्याशायों की एक झलक भी देखनी चाहिए । काफी समय पूर्व, डी० टोक्वेविले नामक एक विद्वान् ने मर्मभेदी यह मत व्यक्त किया था कि विधि-व्यवसाय,

> "एकमात्र ऐसा महान तत्व है जिसे बिना किसी हिंसा या क्षति के ही लोकतंत्र के नैसर्गिक तत्वों के साथ मिलाया जा सकता है.........। मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि लोकतंत्र बना रहेगा यदि सार्वजनिक कारबार में वकीलों के असर में जनता की शक्ति के अनुपात में वृद्धि नहीं होती ।"

51. उन्होंने इस बात पर ठीक ही जोर दिया था कि "वकील अपने जन्म और हित से जनता के होते हैं तथा अपनी आदत और रुचि से अभिजात वर्गों के होते हैं ।" इस प्रकार यह व्यवसाय समुदाय और

1975(8) eILR(PAT) SC

प्रशासन को जोड़ने वाली एक ऐसी कड़ी है जो प्रबुद्ध और उद्देश्यमूलक सामूहिक रूप से आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जाए तो उससे विशिष्टवर्गीय लोकाचार बढ़ता है। निस्सन्देह आजकल वकील निम्नवर्गों से भी भरती किए जाते हैं। भारत के पास ऐसे कितने वकील हैं जो बल प्रदान कर सकते हैं। प्रोफेसर ब्रेबण्टी ने पाकिस्तान बार के बारे में जो मत व्यक्त किया है उसकी कुछ सीमा तक भारत से सुसंगति है और मैं इस प्रकार उद्धृत करता हूं —

> "बार संगमों के रूप में दृढ़ता से संगठित और शक्तिशाली न्यायालयों के साथ समान रूप से सहबद्ध विधिमूलक समाज का आकार मात्र न केवल साधारणत: आदर्शों के प्रसारण और पुनरुत्थान के लिए एक प्रमुख साधन रहा है बल्कि अधिक संख्या में होने के कारण न्यायालयों को बलशाली बने रहने के लिए समर्थ बनाया है और प्रशासनिक अव्यवस्था फैलने से रोका है। यह एक विचित्र विषमता है। यद्यपि विधिमूलक समाज प्राय: सरकार विरोधी और कार्यपालक कार्रवाई के लिए विवश करने वाला होता है तथापि सैद्धांतिक रूप से और सांस्कृतिक रूप से नौकरशाही वर्ग से इसका घनिष्ट तादात्म्य है। विचित्र रूप से स्वस्थ विरोध युक्त यह तादात्म्य वास्तव में विधिमूलक समुदाय की शक्ति को बढ़ाती है। इसे सरकार का खुले तौर पर विरोध करने से सार्वजनिक समर्थन मिलता है और साथ ही समुदाय में स्पष्ट नौकरशाही समर्थन एक ऐसा बल है जिसको भुलाया नहीं जा सकता। इसने तात्विक विधि के दौरान और उसके पश्चात् कार्यपालिका को चुनौती दी है, इसने न्यायालय की अधिकारिता को निर्बन्धित करने के लिए किए गए प्रयत्नों को परिनिश्चित किया है, इसने मूल अधिकारों की न्याय्यता के लिए विवश किया है, इसने अनेक निर्बन्धनकारी अधिनियमितियों को बलात कम किया है। क्या ऐसी विधि राजनैतिक विकाश में रुकावट है? क्या यह इस पद्धति के विरल साधनों का गलत आबंटन है? क्या यह अनुत्पादी मानव-शक्ति का अलाभकर उपयोग है? इसके, प्रतिकूल, हमें यह प्रतीत होता है कि यही राजनैतिक विकास की प्रतिभा है।"

माइकेल हैगर ने प्रोफेसर ब्रेबण्टी का उद्धरण देने के पश्चात् अमेरिकन बार एसोसिएशन जर्नल, जनवरी 1972, जिल्द 58 में "विकासशील राष्ट्रों में वकीलों की भूमिका" (दि रोल ऑफ लायर्स इन डेवेलपिंग कण्ट्रीज) नामक अपने लेख में यह टिप्पणी की है--

> "विधि व्यवसाय के लिए राजनैतिक विशिष्ट वर्ग के भीतर ही भीतर परिवर्तन कराने, बाहर से दबाव डालने और विकासशील नीतियों के प्रति आम जनता का विश्वास प्राप्त करने के लिए अनन्य अवसर हैं और जैसा कि विधिक शिक्षा की बाबत मिहाली और नेल्सन ने मत व्यक्त किया है, विधि स्नातक प्रायः न केवल विधि व्यवसाय में ही बल्कि कारबार, सरकार और राजनीति में भी उत्तरदायित्वपूर्ण ओहदों में फैल जाते हैं।"

52. बार "नाइयों, कसाइयों और मोमबत्ती बनाने वालों" के समान कोई प्राइवेट संगठन नहीं है बल्कि इसके विपरीत वह लोक न्याय और लोक हित की सेवाएं करने वाली एक सार्वजनिक संस्था है। विधि व्यवसाय करने के लिए एकाधिकार अनुज्ञप्ति का दिया जाना तीन धारणाओं पर आधारित है--(1) वकील को सामाजिक रूप से लाभप्रद कृत्य का पालन करना होता है, (2) वकील एक ऐसा वृत्तिक व्यक्ति होता है जो उस कृत्य का पालन करेगा; और (3) एक० वृत्तिक व्यक्ति के रूप में उसका कार्य स्वयं उसके द्वारा और इससे अधिक औपचारिक रूप से सम्पूर्ण व्यवसाय द्वारा विनियमित होता है। विधि व्यवसाय को प्रमुख कार्य का पालन करना चाहिए, वह न्याय प्रशासन के सिवाय और कुछ नहीं है ('विधि व्यवसाय एक लोक उपयोगिता है'--'दि लायर, दि पब्लिक एण्ड प्रोफेशनल रेसपान्सिबिलिटी'--एफ० रेमण्ड मार्कस एट अल० शिकागो अमेरिकन बार फाउण्डेशन, 1972 पृष्ठ 288-289)। बार काउन्सिल के कृत्यों पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि विभिन्न लोक उपयोगी कर्त्तव्य, जिनमें गरीबों की विधिक सहायता करना भी सम्मिलित है, इन निकायों पर इस राष्ट्रीय आशा से डाले गए हैं कि इस एकाधिकार के सदस्य समाज की सेवा करेंगे और सम्मानजनक व्यवसाय के योग्य आचारनीति विषयक् सिद्धांतों का पालन करेंगे। यदि सदस्य के दुर्व्यवहार के शोचनीय मामले होते हैं तो बार की ख्याति और विश्वसनीयता को

1975(8) eILR(PAT) SC

चोट पहुंचेगी और बार काउन्सिल के सिवाय किसका इस संभव असम्मान से, जो कलंकी मनुष्यों के कारण होता है, अधिक संबंध है ? यदि कोई वकील याचना करके, दलाली से और अन्य भ्रष्ट आचरण से 'विजय प्राप्त करने के लिए अपनी मर्यादा से नीचे का काम करता है' तो बार के शासकीय प्रधानों, अर्थात् महान्यायवादी और महाधिवक्ता को भी दुख होता है ।

53. अब मैं **ए० पी० गान्धी** बनाम **एच० एम० सीरवाई**[1] वाले मामले का हवाला दूंगा जिसमें भिन्न-भिन्न मत प्रकट किए गए थे किन्तु सभी ने बार काउन्सिल को "व्यथित व्यक्ति" मानने में सहमति व्यक्त की थी । **भटराजू वाले मामले**[2] के पूर्वतर विनिश्चय में इस दृष्टिकोण के अनुरूप एक टिप्पण को अवध घोषित किया गया था । मुझे कोई भी हिचकिचाहट यह मत व्यक्त करने के जोखिम से नहीं रोकती है कि एडवोकेट्स ऐक्ट जैसे किसी कानून की रूपरेखा तैयार करते समय व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण को इस सुकारण से सीमित रखा जाना चाहिए कि जब अधिकार एवं न्याय के विधिक बांधों को निरंकुशता या नागरिकों के दुष्कृत्यों से भंग किया जाता है तब बार सुरक्षा के प्रहरी के रूप में उनकी रक्षा करता है । साथ ही मैं किसी ऐसे वृत्तिक अधिकरण पर, जो 'ब्रीफ छीनने' और "पक्षकारों की छीनाझपटी" पर मुलम्मा चढ़ाते हैं अर्थात् उनका समर्थन करते हैं, अपने अर्ध-भय को भी नहीं छिपाता, परन्तु यह तब जब कि वे घोर अवचार से कुछ कम रूप में साबित हो जाएं । यदि लवण का अपना स्वाद ही नष्ट हो जाए तो उसे कहां से लवणित किया जा सकेगा ? लेकिन मैं पक्षकारों पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने देने के लिए यह शीघ्र स्पष्ट करना चाहूंगा कि मैं इस मामले में साक्ष्य के गुणागुण के आधार पर कोई मत व्यक्त करने से पूर्णतया विमुख होता हूं ।

54. एक और भी प्रश्न उठता है । वृत्तिक अवचार का मामला ब्रिटिश अर्थ में न तो वाद (लिस) है और न अमरीकी अर्थ में कोई मामला और संविवाद है । यह किसी ऐसे सार्वजनिक व्यवसाय के

---

[1] (1971) 1 एस० सी० आर० 863.

[2] (1955) 1 एस० सी० आर० 1055, 1064.

व्यक्ति के अवचार के बारे में ऐसा सार्वजनिक अन्वेषण है, जिसमें बार के प्रत्येक सदस्य की ख्याति के नष्ट हो जाने का डर है और न्याय-प्रशासन से संबंधित प्रत्येक व्यक्ति इसमें हितबद्ध है। परम्परागत रूप से प्रतिपक्षी पद्धति से अभ्यस्त होने के कारण हम व्यथित व्यक्ति-विशेष की तलाश करते हैं। किन्तु मुकदमेबाजी—लोक हित मुकदमेबाजी—का एक ऐसा नया वर्ग उत्पन्न हुआ है जिसमें सम्पूर्ण समुदाय या उसका एक भाग सम्बद्ध होता है (जैसे उपभोक्ता संगठन या अमरीका में नेशनल एसोसिएशन फॉर एडवान्समैन्ट ऑफ कलर्ड पीपल—एन० ए० ए० सी० पी०) हमारे देश जैसे किसी विकासशील देश में, लोकमूलक मुकदमेबाजी की इस पद्धति से यदि जीवन के नियम के साथ-साथ चलना हो तो विधि के नियम की पूर्ति हो जाती है। जब कोई वकील फंसा होता है तब बार काउन्सिल स्पष्ट रूप से संगठनों के इस प्रवर्ग के अन्तर्गत आता है।

55. मुझे इस दृष्टिकोण के दार्शनिक सिद्धांत के लिए इंग्लैंड और अमरीका में के शास्त्रीय एवं न्यायिक मत से समर्थन प्राप्त होता है एक प्रश्न उठा था कि क्या रेलरोड कंपनी—(बेंगर एण्ड अरूस्टुक रेलरोड)—बेंगर एण्ड अरूस्टुक रेलरोड को अनुचित रूप से पटरी से उतार देने के लिए स्टाकधारियों के विरूद्ध कार्रवाई कर सकती है। यद्यपि शिक्षाविद् आलोचक ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि जिला न्यायालय का यह दृष्टिकोण गलत था कि बेंगर एण्ड अरूस्टुक रेलरोड एकमात्र हिताधिकारी थी। उसने यह भी मत व्यक्त किया था कि बेंगर एण्ड अरूस्टुक रेलरोड की वित्त संबंधी व्यवस्था में जनता के हित से कार्रवाई करने के लिए एक पृथक् हित निहित है। विद्वान् लेखक ने यह लिखा है कि—

> "यह बात निर्विवाद प्रतीत होगी कि रेलरोड में जनता का बहुत ही वास्तविक हित होता है। स्वस्थ राष्ट्रीय आर्थिक-स्थिति के लिए रेलरोडों को अत्यधिक महत्वपूर्ण पाया गया है इसलिए ऐसे किसी भी तथ्य को कारण-कार्य तर्क से लोक कल्याण का महत्वपूर्ण भाग समझा जाना चाहिए। इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाता है कि वित्तीय रूप से स्वस्थ रेलरोड में न केवल उसके स्टाकधारियों का ही बल्कि जनता को भी दिलचस्पी होती है। यह निष्कर्ष निकालते हुए कि रेलरोड़ के प्रबंधमंडल के जनता के प्रति दायित्व

होते हैं तथा निगम के स्टाकधारियों के प्रति वैश्वासिक कर्त्तव्य भी होते हैं, न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि इन दोनों उत्तरदायित्वों में से लोक हित सर्वोपरि है। न्यायालय ने यह चेतावनी दी थी कि यह स्मरण रखा जाना चाहिए कि रेलवे लोक प्रयोजनों के लिए संगठित लोक निगम है....... उन सभी के अपने शेयरधारकों के लिए अधिक लाभांश अर्जित करने से अधिक ऊंची प्रकृति की जनता के प्रति प्राथमिक कर्त्तव्य हैं।" [देखिए बेंगर एण्ड अरूस्टुक रेलरोड बनाम बेंगर पुण्टा आपरेशंस (बेंगर एण्ड अरूस्टुक) में जेम्स एफ० साइमन द्वारा पुर्नविलोकन 482 F 2d 865 (Wst. cir. 1973) अनुदत्त प्रमाणपत्र, 94 S. ct. 863 (1974) कोलम्बिया ला रिव्य, जिल्द 74, संख्या 3, अप्रैल, 1974 पृष्ठ 528, 531–532]

56. इसी प्रकार, अमेरिकन सुप्रीम कोर्ट ने **बेकर** बनाम **कार**[1] (देखिए––मैरीलैण्ड ला रिव्यू, जिल्द 33, 1973 पृष्ठ 506) के मामले में लोक कार्रवाइयों में "साख" (स्टेंडिंग) के प्रति सीमित रुख को शिथिल कर दिया था––

"बेकर वाले मामले में मतदाताओं ने टेनेसी विधानमंडल को 1901 से अब तक अपने आपको पुनः प्रभाजित करने में असफल रहने के कारण चुनौती दी थी: वादीगण उन काउण्टियों में रहते थे जिसका पुराने कानून के अनुसार पूरा प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता था। सुप्रीम कोर्ट ने यह अभिनिर्धारित किया था कि इन मतदाताओं को विधानमंडल की निष्क्रियता को चुनौती देने के लिए अपेक्षित साख प्राप्त थी। न्यायालय ने प्रत्यक्ष क्षति के सिद्धांत का विस्तार स्पष्ट करते हुए यह कहा कि उसके अन्तर्गत पूर्णतः वंचित करने के, जो पहले अपेक्षित था, बजाय किसी मतदाता की मात्र हीनता आती है।"

57. उदाहरणार्थ, अमरीकी विधिशास्त्र में आर्थिक पद्धति में उपभोक्ता के संरक्षण के बढ़ते हुए महत्व को स्वीकार कर लिया गया है और

---

1 369 यू० एस० 186 (1962).

उपभोक्ता संगठनों को कार्रवाइयां आरंभ करने या उनमें हस्तक्षेप करने की स्वीकृति दे दी है, यद्यपि "सुने जाने के अधिकार" के संकीर्ण नियम के अनुसार ऐसे मार्ग को न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता (देखिए—न्यूयार्क यूनीवर्सिटी लॉ रिव्यू, जिल्द 40, 1971 का पृष्ठ 807) वस्तुतः नागरिक संगठनों ने हाल ही में विधिक कार्यवाहियों में "साख" के विस्तार को व्यापक बनाकर सामुदायिक हित के संरक्षण के लिए विधिक कार्यवाइयों के उपयोग किए जाने के लिए अभियान शुरू किया है। (देखिए—बोस्टन यूनिवर्सिटी लॉ रिव्यू, जिल्द 51, 1971 का पृष्ठ 403)।

58. **अटर्नी जनरल ऑफ दि गाम्बिया** बनाम **पियरे सार एन० जो**[1] के सुविख्यात मामले में लार्ड डेनिंग ने अटर्नी जनरल की साख के बारे में यह मत व्यक्त किया था—

> "..........'व्यथित व्यक्ति' शब्द व्यापक अर्थ देने वाले शब्द हैं और उसका कोई सीमित निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए। वास्तव में, उनके अन्तर्गत मात्र ऐसा बाधक व्यक्ति ही नहीं आता जो ऐसी बातों में हस्तक्षेप करता हो जिसके साथ उसका कोई संबंध नहीं है बल्कि उनके अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति भी आता है जिसे यथार्थतः शिकायत है क्योंकि ऐसा आदेश पारित किया गया है जो उसके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। क्या इस प्रयोजन के लिए अटर्नी जनरल का पर्याप्त हित है? माननीय न्यायाधीशों का यह मत है कि उसमें उसका हित है। किसी कालोनी में अटर्नी जनरल लोक हित के संरक्षक के रूप में क्राउन का प्रतिनिधित्व करता है उसका यह कर्त्तव्य है कि वह किसी बैरिस्टर या सालिसिटर के किसी भी ऐसे अवचार को, जो अनुशासनिक कार्रवाई के लिए समुचित आधार प्रदान करने के लिए पर्याप्त गंभीर हो, न्यायाधीश की जानकारी में लाए।"

न्यायाधिपति रे (जैसे कि वे उस समय थे) ने **अदि फिरोजशाह गांधी के मामले**[2] में इस निर्णयाधार को इस प्रकार स्पष्ट किया—

> "जुडीशियल कमेटी ने 'व्यथित व्यक्ति' शब्दों का अर्थान्वयन इस प्रकार किया है कि उसके अन्तर्गत लोक हित का प्रतिनिधित्व

---

[1](1961) ए० सी० 617.

[2](1971) 1 एस०सी०आर० 863.

1975(8) eILR(PAT) SC 1

करने वाले के रूप में गाम्बिया का अटर्नी जनरल भी आता है। (पृष्ठ 927) इस व्यवसाय का तालुक एक ओर तो जनता से है और दूसरी ओर न्यायालयों से। अन्य किसी भी आधार पर महाधिवक्ता की उपस्थिति को स्पष्ट नहीं किया जा सकता।" (पैरा 928)

59. यद्यपि वादों के संदर्भ में "साख" को सीमित न मानते हुए, विधिवेत्ताओं ने इस विषय पर कुछ प्रकाश डाला है। प्रोफेसर एस० ए० डी० स्मिथ ने इस प्रकार मत व्यक्त किया है--

"सभी विकसित विधिक पद्धतियों में लोक हित के दो पहलुओं अर्थात् विधि के प्रवर्तन में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए व्यक्तिगत नागरिकों को प्रोत्साहन देने की वांछनीयता और वृत्तिक मुकदमा लड़ने वाले व्यक्ति को और हस्तक्षेप करने वाले व्यक्ति को उन मामलों में जिनके साथ उसका कोई संबंध नहीं है, न्यायालयों की अधिकारिता का अवलम्ब लेने को प्रोत्साहन देने की अवांछनीयता, के बीच होने वाले विवादों को सुलझाने की समस्या का सामना करना पड़ता है।"

(वी० एस० देशपांडे द्वारा "स्टैंण्डिग एण्ड जस्टिशिएबिलिटी" से उद्धृत, भारतीय विधि संस्थान की पत्रिकाऐं, अप्रैल-जून 1971, जिल्द 13, संख्या 2, पृष्ठ 174)।

60. प्रोफेसर एच० डब्ल्यू० आर० वाडे ने इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

"दूसरे शब्दों में, सरशियोरेराई सुने जाने के अधिकार के संकीर्ण सिद्धांत द्वारा सीमित नहीं है। इसमें लोक कार्रवाई करने का तत्व निहित है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इसमें आवेदक के व्यक्तिगत अधिकारों से परे भी सोचा गया है। इसे अवर अधिकरणों और लोक अधिकरणों द्वारा अपनी शक्तियों का दुरुपयोग करने से रोकते हुए न्याय के तन्त्र को उचित अवस्था में बनाए रखने के लिए बनाया गया है।"

(वी० एस० देशपांडे कृत "स्टैण्डिग एण्ड जस्टिशिएबिलिटी" से उद्धृत, भारतीय विधि संस्थान की पत्रिका, अप्रैल-जून, 1971, जिल्द 13 संख्या 2, पृष्ठ 175)।

यह संभव आशंका भ्रामक है कि जनता के मुताबिक विधिक अवस्था को व्यापक बना देने से मुकदमेबाजी काफी बढ़ जाएगी जिससे न्यायाधीश बोझ से लद जाएंगे, क्योंकि लोक रिष्टि को दबाने के लिए जनता द्वारा न्यायालयों का अवलम्ब लेना तो न्यायिक पद्धति में आस्था प्रकट करना है। इस प्रस्तुत मामले में, यदि प्रत्यर्थियों को इस अप्रत्याशित बात का फायदा उठाने दिया जाए तो न्याय की तलाश में रहने और न्याय के स्तरों को बनाए रखने के संबंध में बार जो बल देती है वह अशक्त हो जाएगा।

61. इस छोटे से प्रश्न पर मेरी चर्चा काफी लम्बी हो गई है किन्तु जहां कोई मत व्यक्त करना हो वहां संक्षिप्तता विचारशक्ति की आत्मा नहीं अपितु किसी और बात का चिह्न होती है।

निर्णय

बहुमत के निर्णय के अनुसार निर्देशित किए गए प्रश्न का उत्तर सकारात्मक दिया जाता है।

प्रश्न का उत्तर सकारात्मक दिया गया।

प्र०/दे०